International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 22-01-2023, Accepted: 21-02-2023, Published: 08-03-2023
Volume 5, Issue 1, 2023, Page No. 19-21

संसार एक गहरा सागर' में समसामयिकता

डॉ. राजेन्द्र सिंह
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जनता महाविद्यालय, चरखी दादरी, हरियाणा, भारत

सारांश
एक सजग, संवेदनशील साहित्यकार अपने परिवेशगत, तथ्यों, कथ्यों और सत्यों को अपनी रचना का वर्ण्य–विषय बनाता है। वह कुशल शिल्पी एवं रचनाधर्मी भी है जो युगीन परिवेश को विभिन्न पात्रों, घटनाओं और परिस्थितियों के माध्यम से सूत्रबद्ध कर पाठक वर्ग के समक्ष, विषय–वस्तु प्रस्तुत करके न केवल अपने प्रयोजन की सिद्धि करता है अपितु समाज की दिशा और दशा भी निर्धारित करने का सार्थक प्रयास करता है। इस प्रकार ''संसार एक गहरा सागर'' समकालीन परिवेश का संजीवांकन तो करता ही है, साथ ही मानव मनोवृत्तियों का चित्रण कर पारिवारिक–सामाजिक सम्बन्धों की शिथिलता और भौतिक प्रतिस्पर्धा का जीवन्त चित्रण करते हुए परिवेशगत विसंगतियों और विषमताओं का यथार्थांकन भी करता है।

मूल शब्दः परिवेशगत स्पन्दन, रचनाधर्मिता, प्रतिस्पर्धा, यंत्रवत्, कोमलतन्तु, विखण्डन, अन्तर्मन, विभीषिका, खामोशी, निशब्दता, पराकाष्ठा, स्वच्छन्दता, करूण–क्रन्दन, अन्तश्चेतना, उद्वेलित, विखण्डन, दुर्व्यसन, टीस

कहने की आवश्यकता नहीं है कि साहित्यकार समाज का सर्वाधिक सजग एवं संवेदनशील प्राणी होता है। वह केवल परिवेश से जुड़ा नहीं है अपितु परिवेशगत स्पंदन को अपनी कला के माध्यम से अभिव्यक्त भी करता है। इस प्रकार वह व्यक्ति होकर भी समाज से जुड़ा है और साहित्यकार होकर भी। उसके कलेवर में भूतकाल, वर्तमान काल एवं भविष्य का बेजोड़ संगम समाहित रहता है। जिसे वह अपनी रचनाधर्मिता के माध्यम से पाठक के समक्ष प्रस्तुत कर समाज का मार्ग प्रशस्त करता है। अतः वह समाज,साहित्य एवं संस्कृति की अक्षय एवं अमूल्य निधि है।

समकालीन युग–परिवेश भौतिकवादी है। पारस्परिक प्रतिस्पर्धा–भाव एवं भौतिक उन्नति के कारण व्यक्ति यंत्रवत् कार्य करता है ताकि वह सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सके। व्यक्ति की इसी क्रियाशीलता के कारण ही उसके पारिवारिक एवं सामाजिक बन्धन शिथिल ही नहीं पड़ते अपितु उसमें विखण्डन की स्थिति थी उत्पन्न हो जाती है। जिसके परिणामस्वरूप मोह–भंग, कुण्ठा, तनाव, घृणा एवं बिखराव को बढ़ावा मिलता है जिससे पारस्परिक प्रेम और सौहार्द का प्रतीक समाज रूपी उपवन भी आज धीरे–धीरे सूख रहा है। 'उपवन' नामक कविता में डॉ. हरिशरण वर्मा जी ने कहा है–

''सूख रहे है उपवन सारे,
छिप गए तितली भँवरे प्यारे,
उड़ गई है खुशबू चमन से,
मिट रहा है मोह वतन से,
बढ़ती है नफरत की लकीरे,
धीरे–धीरे।''[1]

इस भौतिक प्रतिस्पर्धा की दौड़ में तो मानव विजय प्राप्त कर लेता है परन्तु ''इसी बीच कहीं टूट जाते हैं भावनाओं कोमल तन्तु जिन्हें बाद में लाख ढूँढने पर पुनःप्राप्त नहीं किया जा सकता। अहं की पराकाष्ठा तथा अस्तित्व बोध ने भावनात्मक सम्बन्धों को भी जैसे शतरंज के मोहरे बना लिया है। जिनकी चाले वह अपनी इच्छानुसर अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु तथा विरोधी को नीचा दिखाने के लिए चलता है।''[2] इस प्रकार वह दया, ममता इत्यादि का परित्याग करके ईर्ष्या द्वेष को आश्रय देता है जो परिवार एवं समाज के लिए घातक है। डॉ. वर्मा जी समकालीन परिवेशगत अभिव्यक्ति करते हुए कहते है–

क्या इतना निर्दयी हो गया है मानव
जिसने दया की सीमा को लाँघ दिया,
ईर्ष्या, द्वेष, अलगाव के बन्धनों से,
ममतामय भावों को त्याग दिया।''[3]

अत्यधिक स्वार्थ भाव एवं आधुनिकता की तीव्रगामी दौड़ के कारण ही मानवता का क्षय सहज रूप से देखा जा सकता है परन्तु मनुष्य अपने ''भौतिक कार्य–व्यापार में भूल जाता है कि पति, पत्नी,बच्चे को निर्जीव मोहरे नहीं वरन् वे भी हाड़–माँस के जीवित प्राणी है, उनका भी अपना जीवन है। सम्बन्धों के इस खेल में दाम्पत्य सम्बन्ध बिखर कर चूर–चूर हो जाते हैं।''[4] ऐसे परिवेश में कवि मानवता के साथ–साथ कर्त्तव्य बोध का पाठ पढ़ाते दिखाई देते हैं ताकि पारिवारिक–सामाजिक सम्बन्धों के विखण्डन को रोका जा सके। यथा–

''मनुज का आज सपनों से
पल–पल नाता टूट रहा हैं,
लाज शर्म खो गई सब,
ममत्व दामन छूट रहा हैं
ममता की उज्ज्वल शिखा से
सोया हुआ अहसास जगा दे''[5]

व्यक्ति ने स्वार्थ की ज्वाला से सारे रिश्ते–नाते एवं सम्बन्धों को स्वाह कर दिया है जिसके फलस्वरूप प्रेम एवं सद्भाव आज कहीं दिखाई ही नहीं देता। अतः वैमनस्य और लालच को देखकर कवि का अन्तर्मन पुकार उठता है–

''गर्व, स्वार्थ की आग,
जो सब कुछ जला दे,
भ्रमित बुद्धि, स्वाभिमान का चोला,
ईर्ष्या, द्वेष, बेकाबू, जुबान,
जो मित्र को भी शत्रु बना दे।''[6]

इसी तुच्छ भावना ने कौरवों और पाण्डवों को महाभारत के युद्ध की विभीषिका में धेकल दिया जिसमें दोनों परिवारों के

साथ–साथ असंख्य निर्दोष सैनिकों को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी–

''धृतराष्ट्र के पुत्र–मोह
दुर्योधन की स्वार्थ–भावना,
और शकुनि की प्रतिज्ञा ने भी,
यह पावक भड़काई थी
भरी थी अग्नि इसमें,
दुःशासन के तुच्छ भावों की,
पड़ी थी आहुति इसमें,
इज्जत बर्बादी के घांवों की।''[7]

समकालीन परिवेश मं पारिवारिक जीवन घुटन एवं तनाव से परिपूर्ण दिखाई देता है। ''एक घर में रहते हुए परिवार के सभी सदस्य भावना के स्तर पर आपस में स्नेहपूर्ण संवादों से जुड़े हुए नहीं है। अतः स्नेह और सम्बन्धों की मिठास के स्थान पर केवल खामोशी, चुप्पी और निशब्दता शेष रह गई है।''[8] अतः स्नेह और परिवर्तित परिवेश में भारतीय संस्कृति के उपासक कवि सांस्कृतिक मूल्यों को अपनाने का आह्वान करते हैं ताकि समाज में सौहार्दपूर्ण वातावरण बना रहे। देखिएः–

''कामना मेरी रहो मिल–जुलकर
त्याग कर लालच और अहंकार
नही तो ऐसा होगा महाभारत
नष्ट हो जाएगा संसार।''[9]

दाम्पत्य सम्बन्धों की मधुरता को भी आधुनिकता की अंधी दौड़ ने ग्रस लिया है। क्योंकि अहं की पराकाष्ठा उनके मध्य इतनी बड़ी खाई बना देती है जिसे पाटने का प्रयास दोनों में से कोई भी नहीं करता। ''एक दूसरे की छोटी–से छोटी बात को स्वीकार करना उन्हें झुकने और टूटने जैसा लगता है जिसे वे किसी कीमत पर स्वीकार करना नहीं चाहते। सम्बन्धों की डोरी को ये आत्मीयता से जोड़े रखने के स्थान पर अहंकार को झटक दे देकर तोड़ देना चाहते हैं।''[10] लेकिन कविवर डॉ. वर्मा के सम्बन्धों की इस डोर से जोड़ते दिखाई देते हैं ताकि दाम्पत्य जीवन सुचारू रूप से चल सके–

तूम राम बने या न बने/ मैं सीता बन फर्ज निभाऊँगी
खुदा न करे कुछ हो जाए तुझे/ तो सावित्री बनकर तुझको
यमराज से भी माँग लाऊँगी।''[11]

स्मकालीन परिवेश में नारी ने चाह कितनी ही उन्नति, स्वछन्दता एवं समृद्धि क्यों न प्राप्त कर ली हो लेकिन आज भी वह किसी न किसी रूप में मध्ययुगीन नारी की तरह ही जीवन व्यतीत करती दिखाई देती है, उसके अन्तस में आज भी वही करूण–क्रन्दन विद्यमान है। अतः नारी का इस प्रकार मर–मर जीना कवि की अन्तश्चेतना को उद्वेलित करता है–

''प्रत्येक नर कहता है, नारी स्वतंत्र है, स्वच्छन्द है
अरे नारी का स्वतंत्र कहने वालो,
जरा चिन्तन और मनन करो,
नारी आज भी पिंजरे में बंद है।
जर्जर है जख्मी है वह
उसके अन्दर मचा क्रंदन है।''[12]

वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में नारी को आज भी उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता है, भले ही वह सभ्य एवं शिक्षित क्यों न हो। नारी की इस दशा एवं दिशा का यथार्थांकन करते हुए डा. वर्मा जी कहते है–

''सभ्य शिक्षित होकर भी/संस्कारों की बलि चढ़ती है
अर्जन का सृजन का /दफ्तर का बिस्तर का
बोझ इस पर बढ़ रहा।''[13]

कवि एक तरफ जहाँ नारी की दीन–हीन एवं उपेक्षित स्थिति से आकुल–व्याकुल है वहीं दूसरी तरफ नारी द्वारा की जाने वाली पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की अंधी नकल से चिन्तित भी है। नारी की स्वच्छन्दता, लड़खड़ाते और फिसलते कदमों एवं पारिवारिक बिखण्डन को देख कवि कहता है–

''कभी देखती है पिक्चर/कभी पिकनिक को जाती हैं
पतियों की कष्ट कमाई को/किट्टी पार्टी में उड़ाती है।''[14]

कवि सामाजिक, सांस्कृतिक एकता एवं अखण्डता के पक्षधर है। आज समाज में लोग स्वयं को अकेला महसूस करते हैं। कवि इस एंकाकीपन को दूर करने के साथ ही होली पर्व के माध्यम से मिलजुल कर रहने का संदेश देते हैं–

''होली के रंगों की भाँति/तुम भी आपस में मिल जाओ
छोड़कर बैर–द्वैष के भाव/बादलों में बिजली बन जाओ।''15

भ्रष्टाचार ने समाज की नींव को खोखला कर दिया है। जिसमें परिवेश विचित्र और डरावना प्रतीत होने लगा है। केवल यही नहीं सत्य और इंसाफ का स्थान असत्य, झूठ और बेईमानी ने ले लिया है। जो समाज एवं राजनीति को सतत् रूप से अवनति के गर्त में धकेल रहा है। डॉ. वर्मा इस अवमूल्यन का चित्रण करते हुए कहते हैं–

''रिश्वत के हाथों बिक गया हैं इंसाफ/ सच्चाई ने ओढ़ लिया नकाब
हर चीज अब /रिश्वत से जाती पहचानी।''16

आज लगभग प्रत्येक प्राणी मदिरापान जैसे अनेकों दुर्व्यसनों का शिकार हो गया है। जो केवल व्यक्ति के लिए ही नहीं अपितु समाज के लिए हानिकारक है। कवि इस सामाजिक बुराई को त्यागने का संदेश देता हुआ कहता है–

''शराब की बोतल दुनिया को/नागिन बन कर डँसती है
पीकर रक्त मनुष्य का/जहर नसों को भरती हैं।''[17]

शराबी व्यक्ति अपने परिवार का भरण पोषण भली–भाँति नहीं कर सकता। वह अपने परिवार को विरासत में भूख, पीड़ा एवं आँसू आदि प्रदान करता है और खुशहाल परिजनों को अवनति की ओर ले जाता है–

शराबी अपने परिवार को/क्या दे सकता है उपहार
भूखमरी, गरीबी, पीड़ा आँसू/और तूफानों से भरी रात।''[18]

वर्तमान भारतीय समाज पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की अंधी नकल कर रहा है, जो व्यक्ति समाज एवं संस्कृति ही नहीं अपितु सम्पूर्ण देश के लिए घातक है। जिसके परिणामस्वरूप समाज में छटपटाहट, टीस, सम्बन्ध–विच्छेदन, असंतोष एवं यौनकुंठाएँ तथा एड्स जैसी भयंकर बीमारी प्रवेश कर गई। एड्स के बढ़ते प्रकोप को देखकर कवि का अन्तर्मन कराह उठता है। यथा–

अरे मूर्खो...../अपनी इस देवधरा को
क्यों तुम कलंकित करते हो/देश की पवित्र गागर को
क्यों एड्स के विष से भरते हो।''[19]

कवि ने देश–प्रेम के संदर्भ में पैनी तूलिका चलाकर भारत माता की आन–बान–शान के साथ भारतीयों के सम्मान में भी अभिवृद्धि की है तथा भारतीय सैनिकों की सच्ची वीरता की जय–जयकार करते हुए कहते है–

हर घाव उनके सीने पर पाया
यही देख गर्व होता है हमको
किसी ने नहीं माँ का दूध लजाया।''[20]

निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि 'संसार का एक गहरा सागर' नामक काव्य–संग्रह में डॉ. हरिशरण वर्मा ने समकालीन परिवेश का सजीवांकन किया है और बताया है कि आज मानव समाज भौतिक समृद्धि–उन्नति एवं प्रगति के लिए यंत्रवत् कार्य कर रहा है। उसी इस मनोवृति के कारण उसके पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्धों में कटुता एवं शिथिलता स्पष्ट रूप में दिखाई देती है। सम्बन्धों की यह दशा और दिशा वास्तव में परिवार समाज परिवेश एवं देश के लिए चिन्ताजनक है। अनेकों कष्टों एवं समस्याओं की जनक है, ऐसे परिवेश में व्यक्ति का जीवनयापन करना सहज, संभाव्य नहीं है क्योंकि व्यक्ति की स्वार्थ भावना एवं अर्थ लिप्सा उसे कुण्ठा निराशा एवं हताशा की ओर धकेल रही है। इस प्रकार कवि ने समकालीन परिवेशगत चित्रण का अनेक संदर्भों और प्रसंगों के माध्यम से अभिव्यक्त कर समाज को नई दिशा प्रदान करने का सफल प्रयास किया है तथा देश की एकता अखण्डता एवं सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति अपनी अगाध निष्ठा एवं अटूट आस्था प्रकट की है। साथ ही युगीन राजनीतिक परिवेश का कच्चा चिट्ठा खेल भ्रष्ट नेताओं को लताड़ा है, वहीं ईमानदार एवं कर्त्तव्यनिष्ठा लोकसेवकों की प्रशंसा भी की है।''21 केवल यही नहीं समकालीन युग–परिवेश की विषमताओं और विसंगतियों का खुला एवं यथार्थ दस्तावेज प्रस्तुत किया है। इस तरह मानवीय संवेदनाओं से सम्पृक्त यह कृति पाठक वर्ग के अन्तस को झकझोरने की अपार क्षमता के साथ उन्हें चिन्तन–मनन के लिए विवश करती है तथा समाज में पारस्पारिक प्रेम एवं सौहार्द का दीप जलाने की कामना भी करती है ताकि पथभ्रष्ट मानव कर्त्तव्यबोध की पहचान परख कर अपने जीवन के साथ समाज को सही दिशा दे सके–

''कुबुद्धि का मिटा आवरण/सद्बुद्धि का दीप जला दे
भटके हुए हर इंसान को/कर्त्तव्य की याद दिला दे।''[22]

वास्तव में एक सजग संवेदनशील साहित्यकार अपने साहित्य में इन्हीं तथ्यों एवं तत्त्वों की प्रतिष्ठा व्याख्या करता है। अतः डॉ. वर्मा जी ने कुशल रचनाधर्मी होने का परिचय देकर हिन्दी काव्य जगत् को समृद्ध किया हे।

संदर्भ सूची

1. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसाार एक गहरा सागर (उपवन) पृ, 37 सं. 2009
2. सम्पादक, डॉ. हुकुमचंद राजपाल, शब्द सरोकार प्रवेशांक, पृ, 32 अक्टूबर 2003.
3. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसार एक गहरा सागर (तमाशा), पृ, 60 सं. 2009
4. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसार एक गहरा सागर (विधाता), पृ, 32 सं. 2009
5. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसार एक गहरा सागर (विधाता), पृ, 63 सं. 2009
6. वहीं (गुनाहा) पृ. 24 वहीं
7. वहीं. महाभारत, पृ. 26 वहीं
8. डॉ. जयप्रकाश शर्मा, समकालीन हिन्दी काव्य : दशा और दिशा, पृ. 86 संस्करण 2004
9. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसार एक गहरा सागर (महाभारत), पृ, 27 सं. 2009
10. सम्पादक, डॉ. हुकुमचंद राजपाल, शब्द सरोकार प्रवेशांक, पृ, 33 अक्टूबर 2009.
11. डॉ. हरिशरण वर्मा, संसार एक गहरा सागर (साथी), पृ, 94–95 सं. 2009
12. वहीं (नर कहता है) पृ. 110 वहीं
13. वहीं, पृ. 110–111 वहीं
14. वहीं, पत्तियों की बारी, पृ. 119 वहीं
15. वहीं, (होली) पृ. 31 वहीं
16. वहीं (इंसाफ) पृ. 55–56 वहीं
17. वहीं (शराब) पृ. 48 वहीं
18. वहीं, वहीं, वहीं
19. वहीं, (एड्स), पृ. 32 वहीं
20. वहीं, (कारगिल), पृ. 85 वहीं
21. वहीं, (चुनाव), पृ. 86–87 वहीं
22. वहीं, (विधाता), पृ. 63 वहीं